Scanned by CamScanner

# सबलोग –83

संवेद फाउण्डेशन का मासिक प्रकाशन

ISSN 2277-5897 SABLOG



**सम्पादक**

किशन कालजयी

**सहायक सम्पादक**

प्रकाश देवकुलिश

राजन अग्रवाल

उत्तर प्रदेश ब्यूरो : शिवाशंकर पाण्डेय

+919565694757

**सम्पादकीय सलाहकार**

आनन्द कुमार

मणीन्द्र नाथ ठाकुर

आनन्द प्रधान

मंजु रानी सिंह

सन्तोष कुमार शुक्ल

अखलाक 'आहन'

**प्रबन्ध निदेशक**

अभय कुमार झा



**सम्पादकीय सम्पर्क**

बी-3/44, प्रथम तल, सेक्टर-16, रोहिणी,
दिल्ली-110089

+918340436365

**sablogmonthly@gmail.com**

**www.sablogmonthly.blogspot.in**

**सदस्यता शुल्क**

एक अंक 25 रुपये – वार्षिक : 300 रुपये

द्विवार्षिक : 500 रुपये – आजीवन : 5000 रुपये

चेक या बैंक ड्राफ्ट सम्पादकीय पते पर 'संवेद फाउण्डेशन' के नाम भेजें स्वामी, सम्पादक, प्रकाशक व मुद्रक किशन कालजयी द्वारा बी-3/44, सेक्टर-16, रोहिणी, दिल्ली-110089 से प्रकाशित और लक्ष्मी प्रिन्टर्स, 556 जी.टी. रोड शाहदरा दिल्ली-110032 से मुद्रित।



पत्रिका में प्रकाशित आलेखों में व्यक्त विचार लेखकों के हैं, उनसे सम्पादकीय सहमति अनिवार्य नहीं।

पत्रिका से सम्बन्धित किसी भी विवाद के लिए न्यायक्षेत्र दिल्ली।


## इस बार


मुनादी / व्यापक सांस्कृतिक आन्दोलन की जरूरत 4

## हिन्दी समाज और हिन्दी साहित्य

हिन्दी जाति की एकता का सवाल : **रामविलास शर्मा** 5

हिन्दी भाषा-साहित्य और हिन्दी समाज : **जीवन सिंह** 8

हिन्दी समाज का सांस्कृतिक वितान : **अर्चना वर्मा** 10

भाषा का कहर : **प्रेमपाल शर्मा** 12

हिन्दी में साहित्य और समाज का सच : **ज्योतिष जोशी** 14

क्या हिन्दी साहित्य हिन्दी समाज का एक प्रतिरूप है? : **आशुतोष कुमार** 16

साहित्य, समाज से, समाज के लिए उपजता है : **अशोक गुप्ता** 19

हौसला हो, तो सूरत बदल सकती है : **आशुतोष** 21

ज्यादा संजीदगी से सोचने का वक्त : **वैभव सिंह** 23

पढ़ाई का जनतन्त्र या रसों का लोकतन्त्र : **प्रवीण कुमार** 25

हिन्दी पट्टी का सामाजिक सच : **राम नरेश राम** 27

### राज्य

बिहार / सृजन के हमाम में बहुत लोग नंगे : **कुमार कृष्णन** 29

उत्तर प्रदेश / गोरखपुर सीरियल मौत, जिम्मेवार कौन? : **शिवाशंकर पाण्डेय** 32

झारखण्ड / आयोजनों में आदिवासियत : **प्रकाश देवकुलिश** 34

हरियाणा / हरियाणवी की बढ़ती लोकप्रियता : **आदित्य चौधरी** 36

### स्तम्भ

चतुर्दिक / आज का हिन्दी समाज और साहित्य : **रविभूषण** 38

देशकाल / मामला एक रुपया के सिक्का का : **राहुल सिंह** 41

खुला दरवाजा / जानकी बाई 'छप्पन छुरी' : **ध्रुव गुप्त** 43

साँच कहो तो मारन धावे / नामकरण की राजनीति : **शंकर शरण** 45

तीसरी घण्टी / ग्लोबल गाँव में रंगकर्म पर संकट : **राजेश कुमार** 47

क्रान्तिनामा / देशभक्त आका सूफी : **सुधीर विद्यार्थी** 49

एक पुरातत्त्ववेत्ता / हाथ धोये हत्यारा पाँव धोये पापी : **शरद कोकास** 51

स्मरण / त्रिलोचन को पढ़ते हुए : **अपूर्वानन्द** 53

आत्मकथ्य / चुनौतीपूर्ण सफर की दास्तान : **कृष्णा अग्निहोत्री** 55

स्त्रीकाल / बधाई हो 'विकास' हो रहा है! : **ज्योति प्रसाद** 57

प्रासंगिक / हिन्दी का स्वप्न और हिन्दी से बेवफाई : **सुभद्रा राठौर** 59

शिक्षा / भयमुक्त वातावरण : विचार और वास्तविकता : **महेश चन्द्र पुनेठा** 62

साहित्य / बंगाल का दुर्भिक्ष और महाकाल : **बिपिन तिवारी** 64


**आवरण : बंशीलाल परमार**

अगला अंक : गाँधी और हमारा समय


Scanned by CamScanner

# बंगाल का दुर्भिक्ष और महाकाल

बिपिन तिवारी

**जब बंगाल में अकाल आया हुआ था, उस समय नागर जी बम्बई में फिल्मों की स्क्रिप्ट व डायलॉग लिख रहे थे। बंगाल का अकाल इतना भयानक था कि वह अपने को बम्बई में रोक न सके। लिहाजा पैरों ने जिस्म के बोझ को कलकत्ता पहुँचा दिया। वहाँ जो कुछ देखा, बहुत घृणित और अमानवीय था। "सन् '43 के बंग दुर्भिक्ष में मनष्य की चरम दयनीयता और परम दानवता के दृश्य मैंने कलकत्ते में अपनी आँखों से देखे थे। सियालदाह स्टेशन के प्लेटफार्म, कलकत्ते की सड़कों के फुटपाथ ऐसी वीभत्स करुणा से भरे थे कि देख-देखकर आठों पहर जी उमड़ता था।"**

लेखक गोवा विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग में प्राध्यापक हैं।
+919130570121
bipintiwari5@gmail.com

देश में आने वाली आपदाएँ समाज के बने-बनाये ढाँचे को ही नहीं तोड़ती हैं अपितु वह समाज के हर जागरूक आदमी को एक नये सिरे से सामाजिक, राजनीतिक व्यवस्था के बारे में सोचने को मजबूर करती हैं। बंगाल का अकाल कुछ ऐसी ही आपदा थी। उससे समाज का चरित्र तो उजागर हुआ ही साथ ही राजसत्ता कैसे जनता को नाविक विद्रोह, भारत छोड़ो आन्दोलन में शामिल होने की सजा देना चाहती थी, वह भी पता चला। बंगाल का जो अर्थ आज है, उस समय उसका अर्थ अलग (कुछ हिस्सा बिहार, उड़ीसा, पश्चिम बंगाल और कुछ बाँग्लादेश का) था। द्वितीय विश्वयुद्ध के समय इंग्लैण्ड मित्र राष्ट्रों की तरफ था लिहाजा जब धुरी राष्ट्र जापान ने बर्मा पर हमला किया तो इंग्लैण्ड ने बर्मा से जुड़े भारतीय क्षेत्रों-बंगाल के सीमावर्ती इलाकों को खाली कर दिया। ब्रिटिश सरकार ने वहाँ की जनता से ऊँचे दर पर अनाज आदि सामान खरीदा। बंगाल के भद्र वर्ग ने, व्यापारियों ने युद्ध की आशंका में बहुत-सा अनाज अपने घरों/गोदामों में रख लिया। फलतः बंगाल में अनाज का संकट पैदा होने लगा। बंगाल के ब्रिटिश अधिकारी ने गवर्नर जनरल ऐटली और ब्रिटेन के प्रधानमन्त्री चर्चिल को बार-बार पत्र लिखा, पर कोई सन्तोषजनक उत्तर नहीं मिला। गाँव के लोग अपने को जीवित रखने की आशा में शहरों में आने लगे। कलकत्ता और ढाका में नर कंकालों की फौज दिखाई पड़ने लगी। भद्र वर्ग इन सबसे बेखबर विलासिता की जिन्दगी जी रहा था। अकाल से प्रभावित लोग भीख माँग रहे थे और महिलाओं को खुद महिलाएँ और कई बार तो यह भी देखने में आया कि उनके पति/पिता तक वेश्यावृत्ति करने को मजबूर कर रहे थे।

अकाल को रोकने में सरकार ने कोई खास प्रबन्ध नहीं किया वहीं बंगाल के भद्र समाज ने भी अपनी जिम्मेदारी नहीं निभायी। बंगाल से बाहर के लोगों ने बंगाली समाज को अपना मानकर उनकी सहायता की। बंगाल की कम्युनिस्ट पार्टी के महासचिव पी.सी. जोशी दिन-रात दौड़-भाग करके प्रभावित लोगों के खाने-पीने, दवाओं आदि का प्रबन्ध करते रहे। इस आपदा ने साहित्यकारों और



Scanned by CamScanner

कलाकारों को बहुत गहराई तक प्रभावित किया। हिन्दी साहित्य में इस आपदा को लेकर बहुत-सी कविताएँ जिनमें हरिवंशराय बच्चन की 'बंगाल का अकाल', नागार्जुन की 'अकाल' और उसके बाद और रांगेय राघव ने 'तूफानों के बीच' रिपोर्ताज और अमृतलाल नागर ने 'महाकाल' जैसा उपन्यास लिखा। वहीं उर्दू अदब में साहिर लुधियानवी ने महत्त्वपूर्ण नज़्म लिखी थी-'पचास लाख फ़सुर्दा सड़े-गले ढाँचे, निजामें ज़र के खिलाफ एहतजाज करते हैं/ख़ामोश होंठों से, दम तोड़ती निगाहों से बशर, बशर के ख़िलाफ एहतजाज करते हैं।' इसी तरह कला की दुनिया में बंगाल के कलाकारों में चित्तोप्रसाद, जैनुल आबेदीन, फोटोग्राफर सुनील जान्हा आदि ने इस त्रासदी को कैनवास और चित्रों में उतारा। चित्तोप्रसाद के स्केचों में रेखाएँ इस तरह से प्रयुक्त की जाती थीं कि पूरा स्केच मन में गहरे तक खुद कर रह जाता था। उन्होंने बंगाल के अकाल को लेकर 'हंग्री बंगाल' के नाम से रेखाचित्रों की पूरी शृंखला बनायी। शुरुआत में कला की दुनिया में चित्तोप्रसाद की कला को महत्त्व नहीं दिया गया परन्तु बाद में वह बंगाल चित्रकला के मशहूर सितारे बन गये। चूँकि यहाँ बात अमृतलाल नागर के पहले उपन्यास 'महाकाल' को केन्द्र में रखकर करनी है, इसलिए बाकी बातों को यहाँ छोड़ना पड़ेगा। हुआ यूँ कि जब बंगाल में अकाल आया हुआ था, उस समय नागर जी बम्बई में फिल्मों की स्क्रिप्ट व डायलॉग लिख रहे थे। बंगाल का अकाल इतना भयानक था कि वह अपने को बम्बई में रोक न सके। लिहाजा पैरों ने जिस्म के बोझ को कलकत्ता पहुँचा दिया। वहाँ जो कुछ देखा, बहुत घृणित और अमानवीय था। ''सन् '43 के बंग दुर्भिक्ष में मनुष्य की चरम दयनीयता और परम दानवता के दृश्य मैंने कलकत्ते में अपनी आँखों से देखे थे। सियालदाह स्टेशन के प्लेटफार्म, कलकत्ते की सड़कों के फुटपाथ ऐसी वीभत्स करुणा से भरे थे कि देख-देखकर आठों पहर जी उमड़ता था।...' नागर जी को इससे पहले चार दिन भूखे रहने का अनुभव हो चुका था, सो कलकत्ता में जो कुछ देखा, उसके बाद वह कई दिनों तक मुँह में निवाला नहीं ले जा सके। वह जिस संवेदना से इस अकाल से जुड़े, वही आगे चलकर 'महाकाल' उपन्यास रचने में मुख्य कारक बन गया। 1944 में फिल्मी दुनिया से एक महीने की छुट्टी ली और 'महाकाल' उपन्यास लिखा। उपन्यास पूरा हुआ और 1946 में प्रकाशित, लेकिन इस पूरी प्रक्रिया में उन्हें एक बार फिर अकाल की भयावहता से गुजरना पड़ा। वह लिखते हैं कि उपन्यास लिखने के दौरान पहले बार-बार भूख लगती थी, कुछ-न-कुछ खाना पड़ता था लेकिन धीरे-धीरे यह सब बदलता चला गया। उपन्यास में जिस मोहनगंज गाँव की कहानी को केन्द्र बनाया गया है वह सिर्फ मोहनगंज की कहानी है, ऐसा नहीं है। उन्होंने जैसा बंगाल देखा था, ठीक वैसा वर्णन उपन्यास में मौजूद है। उपन्यास का मुख्य कथा पात्र कहने को पाँचू मुखर्जी हेडमास्टर है, पर वह भी अपने पूरे वर्गीय दोहराव के साथ आया है। इस उपन्यास को खालिस साहित्यिक सन्दर्भों में रखकर देखने की जरूरत नहीं है। इस उपन्यास में कथाकार ने बंगाली समाज का सूक्ष्म विवेचन किया है। वह चाहे बंगाल के अकाल को प्राकृतिक आपदा मानने वाले विचार का खण्डन हो या फिर गाँव के जमींदार और व्यापारी वर्ग की कारस्तानियों का वर्णन। उपन्यास पात्रों की चरित्रगत कमियों-कमजोरियों को गहराई से व्यक्त करता है। बंगाल के अकाल को लेकर यदि राजनीतिक हलकों में देखा जाये तो बाबू राजेन्द्र प्रसाद ने जेल से अकाल पीड़ितों की सहायता के लिए प्रफुल्लरंजन दास (जो कि सहायतार्थ रुपये जमा करने का प्रयास कर रहे थे) को पत्र लिखकर, लोगों से आर्थिक सहायता, अन्न दान करने की अपील की, लेकिन वह पत्र सरकार द्वारा रोक लिया गया। उन्होंने पत्र में 'स्टेटसमैन' अखबार का हवाला देते हुए सरकार से इस समस्या पर ध्यान देने का आग्रह किया था। कुछ तथ्य आपके सामने उनके लेख-बंगाल का अकाल और भारत की अखण्डता-से रखता हूँ। '... इसके प्रधान कारणों में एक प्रधान कारण यह भी कहा जाता है कि गवर्नमेण्ट ने लड़ाई के कारण लोगों से धान-चावल ले लिया था और उनकी छोटी नौकाएँ भी ले ली थीं। शत्रु को कुछ न मिलने देने के लिए समुद्र तट के स्थानों को साधनहीन अथवा मरुभूमि बना देने की जो नीति जापानी आक्रमण के कारण बरती गयी थी, वह इस अकाल के लिए कम जवाबदेह नहीं थी।' वहीं नेहरू जी ने अकाल को मानव निर्मित मानकर, तर्क प्रस्तुत किये। उन्होंने अपने पक्ष में बंगाल सरकार द्वारा नियुक्त जाँच कमेटी जिसके अध्यक्ष सर जॉन वुडहैड की मई 1945 में प्रकाशित रिपोर्ट को उद्धृत किया-''हमारे लिए बंगाल के अकाल की वजहों की छानबीन करना एक बहुत दुःख और दर्द से भरा काम रहा है।...बंगाल के अकाल में पन्द्रह लाख आदमी उन हालतों के शिकार हुए, जिनके लिए वे खुद जिम्मेदार नहीं थे।...सारी हालतों पर गौर करते हुए हम इस नतीजे को टाल नहीं सकते कि बंगाल सरकार के लिए यह मुमकिन था कि वह हिम्मत के पक्के इरादे से, ठीक वक्त पर सोच-समझकर इन्तजाम से, अकाल की भयंकर बरबादी को बहुत हद तक रोक सकती थी...'' सर जॉन वुडहैड ने जनता के कुछ हिस्से को भी कसूरवार माना है। इसका सीधा-सा अर्थ यह है कि जो कुछ बंगाल में आपदा आयी, वह मानव-निर्मित थी। ठीक यही तर्क अमृतलाल नागर अपने उपन्यास के पात्रों के माध्यम से प्रस्तुत करते हैं। यहाँ जो कहानी आपको सुनाना चाहता हूँ उसका अर्थ बस इतना है कि साहित्य में जो रचा जाता है, वह सब कोरी गप्प मात्र नहीं होता और न ही मन बहलाव के लिए लिखा जाता है।

नेहरू जी ने हिन्दुस्तान की कहानी में 'हिन्दुस्तान का मर्ज अकाल' लेख में ब्रिटिश सरकार की नीतियों की वास्तविकता दिखाने के साथ-साथ बंगाल के भद्र समाज की भी असलियत बयान की है, जिससे उनका चरित्र भी सामने आये। वह बंगाली भद्र समाज जो अपने को बंगाली संस्कृति का अलम्बरदार मानता है, समाज के गरीब-वर्ग को असभ्य मानकर उससे दूरी रखता है, उसकी भी सच्चाई लोगों को पता चले। उपन्यास में पाँचू मुखर्जी के मार्फत नागर जी ऐसे भद्र-वर्ग की सच्चाई बयान करते हैं। '...आबरू और स्वार्थ ने उसे कायर बनाया था। मध्यवर्ग का, कुलीन, सद्गृहस्थ, अँग्रेजी पढ़ा-लिखा हेडमास्टर भला इन छोटे लोगों का साथ कैसे दे सकता है? जब लोग न्याय के लिए लड़ रहे थे, तब भी वह दुबका खड़ा रहा, और जब लोगों पर



Scanned by CamScanner

अन्याय की मार पड़ने लगी तब भी वह वैसे ही दुबका रहा। हाँ, दिमागी जोर बराबर दिखाता रहा।...' ठीक यही तर्क रांगेय राघव अपने रिपोर्ताज 'तूफानों के बीच' में प्रस्तुत करते हैं। वह आगरा से डॉक्टरों की पूरी टीम के साथ बंगाल के लोगों की सेवा-सुश्रूषा करने गये थे, तो बंगाल के गाँवों में कुछ ऐसे लोगों के बारे में गाँव के लोगों ने बताया, जो घरों में अनाज रखा होने के बावजूद लोगों को अनाज नहीं दे रहे थे। लेकिन जब प्लेग की बीमारी में उनके परिवार के लोग मरने लगे तो उनका नजरिया बदला। यह तथ्य दिखाते हैं कि बंगाल का भद्र-वर्ग कितने स्वाथपूर्ण तरीके से जीवन जी रहा था। वैसे यह कोई बंगाल की बात नहीं है अभी कुछ साल पहले नेपाल में जो आपदा आयी थी वहाँ भी ऐसे लोगों की करतूतें अखबारों में छायी रहीं। ऐसे लोगों के लिए अमृतलाल नागर 'चिकने घड़े' शब्द का प्रयोग करते हैं। आपको भले ही यह बात कोरी गप्प लगे पर यदि तथ्य है तो उसे नकारा नहीं जा सकता। '...इतनी भूख के वातावरण में लोगों से मुँह में कौर लेते नहीं बनता था। बहुत से ऐसे भी थे जिनके ऊपर उन दृश्यों का उतना ही असर होता था जितना चिकने घड़े पर पानी का होता है। 'दुनिया दुरंगी मकारा सराय, कहीं खूब-खूबाँ कहीं हाय-हाय।' सोचने की बात यह है कि आदमी कैसे अपने ऊपर स्वार्थों की ऐसी मोटी खाल कैसे ओढ़ लेता है, जिस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। उपन्यास में मोनाई और दयाल जमींदार ऐसे ही व्यक्ति हैं जो हर स्थिति में अपने स्वार्थ पूरे कर रहे हैं। लोग अपने घरों का सब कुछ बेचकर चावल खरीदने के लिए मोनाई की दुकान पर याचना कर रहे हैं और मोनाई है कि झूठी कसमें खाता जा रहा है कि एक भी चावल की कनी दुकान में नहीं है। वहीं जब लोग जबर्दस्ती करने लगते हैं तो दयाल जमींदार जनता पर गोली चलाता है और फिर मोनाई के चावलों को बाँटकर जनता का हितैषी बनने का नाटक करता है। मोनाई जानता है कि दयाल जमींदार ने यह सब खुन्नस के कारण किया है। वही मोनाई बाद में गाँव की औरतों को धर्मशाला भेजने के नाम पर जिस्मफरोशी का धन्धा करता है। इस धन्धे में दयाल जमींदार भी अपने आदमियों के माध्यम से शामिल है। उपन्यास को पढ़ते हुए मन में बार-बार घृणा पैदा होती है कि आदमी कितना नीचे गिर सकता है। गाँव के लोग भूख के मारे अपनी पत्नी और बेटी तक को बेच रहे हैं। वहीं गाँव का बेनी अपनी मर चुकी पत्नी की लाश को गँड़ासे से काटकर खाता है। एक आदमी अपनी बेटी के सर को चूल्हे में लगा देता है। कलकत्ता और मुर्शिदाबाद की सड़कों पर नर कंकाल डोल ही नहीं रहे थे अपितु उनके अस्थिपंजर जगह-जगह पड़े हुए थे जिनको कुत्ते नोच-नोचकर दावतें उड़ा रहे थे। 'दावतें उड़ाना' शब्द का प्रयोग मैंने जान-बूझकर किया है, इस शब्द का जो अर्थ अच्छे दिनों में होता है, वही अर्थ अकाल के दिनों में नहीं रह जाता है। लेकिन यदि रचनाकार ऐसे शब्द का प्रयोग करे तो इसका कोई विशेष अर्थ होता है। कुत्ते जिनको खाने के लिए कुछ भी नहीं मिल पा रहा था तो उनके लिए मांस का इफरात में मिलना दावत से कम खुशी की बात नहीं है। चित्तोप्रसाद के रेखाचित्रों में ऐसे दृश्यों को देखा जा सकता है। ठीक ऐसे ही दृश्यों को सुनील जान्हा ने भी अपने कैमरे में कैद किया था। उपन्यास में एक प्रसंग आया है कि मोनाई ने अपने द्वारा बनवाये गये मन्दिर के पुजारी से उसकी पत्नी, बहन को भी धर्मशाला में भेजने की बात कही थी। इसको लेकर पति-पत्नी में भी खूब लड़ाई हुई। अन्ततः पत्नी, बहन ने अपनी पहनी साड़ियों को निकालकर आत्महत्या कर ली। अपराध-बोध में पुजारी अपने बच्चों को जहर पिलाकर खुद को समाप्त कर लेने का प्रयास करता है। बच्चियों को कनेर की जड़ का रस पकाकर, एक-एक प्याला पिलाकर और जब खुद पीने के लिए प्याला उठाया तो देखता है कि उसकी गाय का बछड़ा उसको देखकर रम्भा रहा है, जिसका उसने वध कर दिया था। प्याला में जहर इतना नहीं है कि वह उसे भी पिला सके लिहाजा वह उसके प्रति अपनी जिम्मेदारी महसूस करते हुए प्याला रख देता है। प्रायश्चित करने के लिए वह घुट-घुटकर मरने की प्रतीक्षा करने की बात कहता है। यह घुटन उपन्यास के बहुत से पात्रों में देखी जा सकती है। माँएँ अपने बच्चों को छातियों से दूध न आने के बावजूद अपनी छातियों से लगाये रखती हैं कि वह कुछ देर तक तो बहला रहेगा। ऐसा करने में वह भयानक यातना महसूस करती हैं, पर मजबूर हैं बच्चों की बेबसी देखकर।

बंगाल के अकाल में जो चीज सबसे भयावह रूप में देखने को मिलती है, वह है आपदा के समय में भी लोगों में साम्प्रदायिकता की भावना पैदा होना। लोग अपनी जाति-धर्म के लोगों को खास सहूलियतें प्रदान कर रहे हैं। अकाल के समय इस तरह की राजनीति मुस्लिम लीग और हिन्दू महासभा के लोग कर रहे थे। बंगाल में उस समय मुस्लिम लीग शासन कर रही थी परन्तु उसकी सहानुभूति मुस्लिम-वर्ग के प्रति ज्यादा दिखाई पड़ती है। इतिहासकार बिपिन चन्द्र साम्प्रदायिकता के सम्बन्ध में कहते हैं कि यह जरूरी नहीं है कि जब धार्मिक मसले की बात हो तभी साम्प्रदायिकता का अस्तित्व दिखाई पड़ता है अपितु आपदा के समय, राहत बाँटने में भी इसकी उपस्थिति को सहज देखा जा सकता है। बंगाल के अकाल को लेकर अभी तक बहस चल रही है। नोबेल पुरस्कार प्राप्त अर्थशास्त्री अमर्त्य सेन ने बंगाल के अकाल के पीछे ब्रिटिश सरकार की नीतियों को ही उत्तरदायी माना है। उनका तर्क है 1941 की तुलना में 1943 में उत्पादन पहले से ज्यादा हुआ था। ऐसे में यह कैसे सम्भव है कि अकाल अनाज की कमी से हुआ। हाँ, यह बात सही है कि बर्मा (म्यांमार) पर जापान के आक्रमण से वहाँ से चावल को आयात नहीं किया जा सकता था परन्तु इंग्लैण्ड ने अमेरिका और कनाडा के चावल भेजने के प्रस्ताव को ठुकरा दिया था। इससे पता चलता है कि अमृतलाल नागर ने जो सवाल 'महाकाल' उपन्यास में उठाये, वह आज भी कितना मौजूँ है। आज जब साम्प्रदायिक को बढ़ावा देने वाला दल ही शासन कर रहा है, तब इस उपन्यास पर विचार करना और भी जरूरी हो जाता है, जिससे पाँचू मुखर्जी जैसे मध्य-वर्ग के लोग अपने स्वार्थों को छोड़कर मोनाई और दयाल बाबू के खिलाफ खड़े हो सके। ❑



Scanned by CamScanner